International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 04(II), October - December, 2023, pp. 268-270

वैश्विक पर्यावरणीय असंतुलन के निराकरण में भारतीय संस्कृति की भूमिका

श्री प्रभाशंकर द्विवेदी*
डॉ. हेमन्त कुमार**
प्रो. एस. के. रावत***

प्रस्तावना

जैविक एवं अजैविक तत्वों से मिलकर बना हुआ हमारा पर्यावरण ही हमारे जीवन का आधार है बल्कि यह कहें कि जीवन के लिए जो अपरिहार्य तत्व है वे सब हमारे पर्यावरण के भाग हैं। इसलिए इसकी उपेक्षा किसी भी परिस्थिति में नहीं की जा सकती क्योंकि पर्यावरण के असंतुलन से अनेक महामारी, असाध्य रोग, खतरनाक वायरस, बैक्टीरिया, दूषित जल, दूषित वायु एवं वैश्विक तापमान में वृद्धि आदि अनेक समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। वैसे तो पर्यावरणीय असंतुलन को प्रकृति स्वयं ही संतुलित करती रहती है किन्तु अत्यधिक मानवीय हस्तक्षेप ने पर्यावरण के संतुलन को इतना विकृत कर दिया है कि हमारा अस्तित्व ही दांव पर लग गया है। वर्तमान समय के इस औद्योगिक एवं सुविधाभोगी युग में पर्यावरण को संतुलित एवं संरक्षित करना एक गम्भीर चुनौती बनी हुई है। आज का मूल प्रश्न यही है कि आखिर पर्यावरण का इस तरह विकृत होने का क्या कारण है कि इससे मानव जीवन ही संकट में पड़ता जा रहा है।

पर्यावरणीय असंतुलन के कारकों पर विचार करने से पूर्व पर्यावरण किसे कहते है यह जान लेना अपेक्षित हो जाता है।

पर्यावरण

वैसे तो हमारे जीवन के लिए जो भी जैविक और अजैविक तत्व अपरिहार्य हैं, वे सब मिलकर हमारे पर्यावरण का निर्माण करते हैं। पर्यावरण का निर्माण जलमण्डल, स्थलमण्डल, वायुमण्डल और जैवमण्डल से मिलकर होता है अर्थात प्रकृति की समस्त जैविक एवं अजैविक परिस्थितियां मिलकर ही पर्यावरण का निर्माण करते हैं।

द यूनीवर्सल इनसाइक्लोपीडिया के अनुसार–

''पर्यावरण उन सभी दशाओं, प्रणालियों तथा प्रभावों का योग है जो जीवों व उनकी प्रजातियों के विकास, जीवन एवं मृत्यु को प्रभावित करता हैं।''

पर्यावरण को परिभाषित करते हुए **ओडम** ने कहा है कि

''परिस्थितिकी जीवों एवं पर्यावरण के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन है।''

भारतीय पर्यावरणविद **प्रो0 रामदेव मिश्र** के अनुसार

''रूप (forms) तथा कारकों (facts) की अन्योन्य क्रियाओं के अध्ययन को पारिस्थितिकी कहते हैं।''

स्पष्ट हैं कि पृथ्वी, जल, वायु, विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तुओं, नदी, वृक्ष, वनस्पतियों, नदी, पठार, पर्वत और जंगलों को सुरक्षित एवं संरक्षित करके ही पारिस्थितिकी तंत्र को सन्तुलित किया जा सकता है।

* राजकीय महाविद्यालय, कासगंज, उत्तर प्रदेश।
** राजकीय महाविद्यालय, कासगंज, उत्तर प्रदेश।
*** राजकीय महाविद्यालय, कासगंज, उत्तर प्रदेश।

दुर्भाग्य से आज पर्यावरण के सभी आयामों (पृथ्वीमण्डल, जलमण्डल, वायुमण्डल एवं जीवमण्डल) को इतना विकृत किया जा चुका है कि पर्यावरण को संतुलित रखना एक गम्भीर चुनौती बनी हुई है। पर्यावरण अंसतुलन के कारकों पर विचार करें तो पता चलता है कि औद्योगीकरण, नगरीकरण, अत्यधिक जनसंख्या, प्राकृतिक संसाधनों का व्यापारीकरण एवं हमारी सुविधाभोगी जीवनशैली ने पर्यावरण को अत्यधिक विकृत किया है। पर्यावरणीय असंतुलन के कारकों का समुचित अध्ययन किया जाये तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इन कारकों की वृद्धि में हमारी भोगवादी संस्कृति, स्वार्थ एवं सुविधाभोगी प्रवृतियां, असंतोष एवं संग्रह की मनोवृत्तियां, असंयमित एवं अनुशासनहीन प्रकृति एवं पर्यावरण विरूद्ध जीवनशैली ही पर्यावरणीय असंतुलन के कारकों के लिए जिम्मेदार है। इस तरह से इन प्रवृत्तियों को सीमित एवं नियंत्रित करके ही पर्यावरण असंतुलन को बढ़ाने वाले कारकों नियंत्रित किया जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरणीय संतुलन

पर्यावरणीय असंतुलन को कम करने के लिए कई दशकों से अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रयास किये जा रहें हैं फिर भी पर्यावरणीय असंतुलन को नियंत्रित करने के लिए इसके कारकों की वृद्धि करने वाली हमारी धारणाओं, जीवन मूल्यों, जीवनशैली आदि में परिवर्तन लाना अपरिहार्य है क्योंकि असंतुलन को बढ़ाने वाले कारकों को तभी नियंत्रित एवं सीमित किया जा सकता है, जब हमारे जीवन दर्शन, जीवन मूल्य एवं धारणाओं में इस तरह सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके जो पर्यावरण के अनुकूल हों। पर्यावरणीय संतुलन के अनुकूल जीवन मूल्य एवं धारणायें हमें भारतीय संस्कृति में सहज देखने को मिलती हैं क्योकि भारतीय संस्कृति अपने आद्यकाल से ही प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति संवेदनशील रही है। इसमें पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि का न केवल दैवीयकरण किया गया है बल्कि इन्हें सुरक्षित एवं पवित्र रखना भी हमारा कर्तव्य बताया गया है। ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त में कहा गया है कि–

''माता भूमि पुत्रोहं पृथिव्या''

अर्थात पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।

ऋग्वेद के पृथ्वी सूक्त (6) में कहा गया है–

विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।
वैश्वानर विभ्रती भूमिरग्नि मिन्द ऋषभा द्रविणे न धातु।।

समूचे विश्व का भरण–पोषण करने वाली धरती माता हमेशा सम्पन्न रहें, सोने की खान के समान सौभाग्यशाली रहें एवं इनकी ममता की शीतल छाया मानव को मिलती रहे एवं हम इसे संरक्षण दें, यही इस सूक्त का कथन है।

यजुर्वेद का शान्तिपाठ भी पर्यावरण में सन्तुलन का ही उल्लेख करता है–

ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष, शान्ति पृथ्वी, शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्ति विश्वेदेवाः
शान्तिब्रह्म शान्तिः सर्वशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि।

– यजुर्वेद 36/17

अर्थात् द्यौ, अन्तरिक्ष, जल, वायु, औषधियां, वनस्पतियां और पृथ्वी आदि सभी में शान्ति बनी रहे और इनसे सभी को शान्ति मिलती रहे एवं पर्यावरण के सभी अवयवों में सन्तुलन बना रहे।

इसी तरह ऋग्वेद में आकाश, पृथ्वी एवं समस्त वनस्पतियां मनुष्यों के लिए सुखकारी एवं कल्याणकारी हों इसकी प्रार्थना ईश्वर से की गयी है।

शं नो द्यावापृथ्वी पूर्व हूतौ शमन्तरिक्ष दृशये नो अस्तु।
शं नो औषधिर्वनिनों भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः।।

वायु के पवित्रता पर बल देते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि–

वात आ वातु भेषजं
शम्मोमयोयु नो हदे

प्राण आयुधि वारिषद्

अर्थात जो वायु हमारे ह्रदय के लिए स्वास्थ्य एवं गुणकारी हो वही वायु हमें दीर्घायु करे।

वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण एवं उसके अवयवों के संरक्षण के लिए अनेक प्रार्थनाएं की हैं–

मापो नौषधीहि ऊ सीर्धाम्नों धाम्नो रार्जेस्ततो वरूणनोमुंच

अर्थात हे राजन अपने राज्य के स्थानों में जल और वनस्पतियों को हानि मत पहुंचाओं, ऐसा उद्यम करो जिससे हम सभी को जल एवं वनस्पतियां सतत रूप से प्राप्त होती रहें।

अख्यं ते पृथिवि स्योनमस्तुते।

अर्थात हे धरती तुम्हारे ऊपर लहराते हुए हरे–भरे जंगल सुखदायक हों!

पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत तथा आयुर्वेद के ग्रंथो में भी पर्यावरण एवं प्रकृति के प्रति मैत्रीपूर्ण व्यवहार करने को प्रेरित किया गया है।

इस प्रकार वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण के प्रत्येक घटक पृथ्वी, जल, वायु अग्नि, वृक्ष और वनस्पतियों को न केवल पूज्य तथा आदरपूर्ण स्थान दिया है बल्कि उनकी सुरक्षा एवं संतुलन के प्रति जागरूक भी रहे हैं। आज भी प्रत्येक धार्मिक व मांगलिक अनुष्ठान किसी पवित्र नदी या जलाशय के तट पर किये जाने का विधान है। किसी भी धार्मिक पर्व एवं मांगलिक उत्सवों में आज भी नदी, वृक्ष, भूमि, जल, सूर्य, चन्द्र आदि की पूजा अनिवार्य माना जाता है। पीपल, तुलसी, आंवला, वट, बरगद, आम आदि वृक्षों की पूजा विशेष अवसरों पर की जाती है तो वहीं दूसरी ओर प्रत्येक घर के आंगन में तुलसी का पौधा लगाने की अनिवार्यता बताई जाती है।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति, प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रति मैत्रीपूर्ण व्यवहार की हिमायती रही है। यह एक ओर जहां वन, नदियों, पर्वतों, जल, वायु आदि की शुद्धता एवं सुरक्षा के प्रति संवेदनशील रही है वहीं दूसरी ओर इसके अत्यधिक दोहन से प्राप्त सुविधापूर्ण जीवन शैली का निषेध करती है क्योंकि भारतीय संस्कृति भोगवादी नहीं बल्कि योगवादी है। यहां जीवन को संयमित एवं अनुशासित करके शारीरिक एवं मानसिक रूप से शक्तिशाली बनाना ही उद्देश्य है, जिससे मानव जीवन सुखमय एवं स्वस्थ हो सके।

इस प्रकार आज हम सभी को भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों एवं जीवन शैली को आत्मसात करने की जरूरत है तभी हमारा पर्यावरण संतुलित हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद
2. अर्थवेद
3. याज्ञवल्क स्मृति
4. भगवद्गीता
5. महाभारत
6. पर्यावरण अध्ययन (साहित्य भवन पब्लीकेशन)
7. समाज दर्शन (राममूर्ति पाठक)

❖◆❖